ISSN -PRINT-2231-3613ONLINE2455-8729
International Educational Journal
UGC APPROVAL NO. - 42652
CHETANA

Receivedon 28th Feb 2018, **Revised** on 7th Mar 2018; **Accepted** 17th Mar 2018

आलेख

भारतीय शिक्षा : एक परिदृश्य

* डॉ. ऋषिपाल सिंह, प्रवक्ता
डॉ. सोनिया पँवार, प्रवक्ता
किसान इण्टर कॉलिज कंकरखेड़ा, मेरठ

मुख्य शब्द – *शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, नैतिक, आध्यात्मिक, चारित्रिक आदि।*

सारांश

शिक्षा एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है– "Education is from cradle to grave" शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों को देश का अच्छा नागरिक बनाने के साथ–साथ उन्हें भविष्य में आने वाली चुनौतियों का सामने करने योग्य बनाकर आगामी जीवन के लिए तैयार करना भी है। यदि शिक्षा अच्छी है तो समाज अच्छा होगा और देश भी अच्छा होगा। प्रत्येक देश का भूत, वर्तमान और भविष्य वहाँ की शिक्षा पर निर्भर करता है।

प्राचीन काल में विद्यार्थी के लिए गुरु ही सब कुछ था। वह विद्यार्थी के लिए ईश्वर स्वरुप था। मध्य युग में आदर्शवाद का प्रचलन था तब शिक्षण का स्वरुप काफी संकीर्ण हो गया था। इस युग में शिक्षक जो ज्ञान छात्र को प्रदान करता था वह उसकी अपनी इच्छा के अनुसार होता था। उसमें विद्यार्थी की इच्छा, योग्यता, क्षमता या रुचि का कोई ध्यान नहीं रखा जाता था। इस प्रकार शिक्षण प्रक्रिया केवल शिक्षक केन्द्रित थी। वर्तमान में शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों को केवल ज्ञान प्रदान करना न होकर बालक का सर्वांगीण विकास करना है।

विद्यार्थी देश और राष्ट्र की सम्पत्ति और उसके भावी कर्णधार होते हैं। उनके शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, नैतिक, आध्यात्मिक एवं चारित्रिक गुणों के विकास का उत्तरदायित्व शिक्षक पर होता है। शिक्षक उस माली की तरह है जो पौधों को सींचता है और उन्हें फलने–फूलने योग्य बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देता है। इस प्रकार अनेक व्यक्तित्व का निर्माण करने वाला शिक्षक एक व्यक्ति न होकर स्वयं एक संस्था होता है।

शिक्षा का अर्थ

शिक्षा का मूल अर्थ है व्यवहार में परिवर्तन अर्थात् शिक्षा वह है जो व्यक्ति के आचरण में परिवर्तन ला देती है। यदि व्यक्ति के व्यवहार या आचरण में कोई परिवर्तन नहीं होता है तो इसका अर्थ है कि शिक्षा का उद्देश्य प्राप्त नहीं हुआ है। स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में–''मनुष्य में जो सम्पूर्णता सुप्त रुप में विद्यमान है, उसे प्रत्यक्ष करना शिक्षा का कार्य है।''

शिक्षा व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक शक्ति प्रदान करती है। इसके माध्यम से व्यक्ति के वर्तमान जीवन और आने वाली पीढ़ी के जीवन को सुगम एवं आनन्ददायक बनाने में मदद मिलती है। शिक्षा का मूलभूत उद्देश्य भ्रान्तियों, विकृतियों और कुरीतियों के बन्धन से छुटकारा पाकर जीवन को स्वतन्त्र चिन्तन करने योग्य बनाना है। सफल जीवन के लिए शिक्षा बहुत उपयोगी है जो हमें शिक्षक द्वारा प्रदान की जाती है। एक शिक्षक का सम्बन्ध केवल शिक्षा से न होकर बल्कि छात्र के सम्पूर्ण व्यक्तित्व से जुड़ा होता है। प्राचीन काल में शिक्षा का उद्देश्य धर्म और संस्कृति की शिक्षा प्राप्त कर इसका प्रचार–प्रसार करना था परन्तु वर्तमान शिक्षा का उद्देश्य शिक्षा प्राप्त कर अधिक से अधिक धन

कमाना अर्थात् भौतिकवाद की ओर ले जाना है। इस प्रकार भारतीय शिक्षा के मूल्यों में ह्रास हुआ है। वर्तमान समय में शिक्षा का तात्पर्य पढ़ाई और परीक्षा तक ही सीमित हो गया है। आज शिक्षक की जरुरत गौण हो गई है और अभिभावक एवं छात्र दोनों पढ़ाई से ज्यादा परिणाम पर जोर देते हैं। यही कारण है कि शिक्षा में कदाचार की प्रवृत्ति को बल मिला है। आज के इस भौतिकतावादी युग में प्रत्येक व्यक्ति की भूमिका बदल रही है और ऐसे में शिक्षा और विद्यार्थी इससे कैसे अछूते रह सकते हैं?

शिक्षा जीवन जीने की कला सिखाती है। कला का अर्थ है कि हम उस विद्या के अन्दर तक डूब कर सीखें जैसे हमें तैरने की कला सीखनी है तो हमें पहले पानी में उतरना पड़ता है। इसी प्रकार विद्यार्थी को पानी से जोड़ना होगा फिर उसे तैरने की कला सीखनी होगी अर्थात् विद्यार्थी को भारतीय संस्कृति से जोड़ना होगा। शिक्षा हमें समानता का अधिकार देती है। शिक्षा से ही हम अपनी रुचि के अनुसार क्षेत्र विशेष का ज्ञान प्राप्त कर अपना जीवन यापन आसानी से कर सकते हैं और समाज का मार्ग दर्शन भी कर सकते हैं। जॉन डिवी के अनुसार– "Education is the development of all those capacities in the individual which will enable him to control environment and fulfill his possibilities."

विभिन्न काल में शिक्षा व्यवस्था

हमारी शिक्षा पद्धति सदियों से शिक्षक केन्द्रित रही है। यदि हम क्रमशः प्राचीन काल से शिक्षा पद्धति को देखे (गुरु–शिष्य के सम्बन्ध में) तो यह दृष्टिगत होता है कि वैदिक काल में गुरु और उनके शिष्यों के बीच सम्बन्ध अत्यन्त मधुर एवं आध्यात्मिक होते थे। शान्त एवं सुरम्य स्थान में स्थित आश्रम का सर्वेसर्वा गुरु ही होता था। गुरु का एक सम्मानित एवं महत्वपूर्ण स्थान होता था। गुरुकुल का वातावरण परिवारमय होता था। गुरु माता–पिता के समान स्नेह, दुलार एवं पोषण प्रदान करता था। गुरु अपने अनुपम व्यक्तित्व, सुन्दर विचारों, गहन ज्ञान, सरल तथा प्रभावशाली शिक्षण से छात्रों को प्रभावित करता था। यही कारण था कि उस काल में छात्र या शिष्य अपने गुरु के प्रति विनम्र एवं आज्ञाकारी होते थे तथा गुरु सेवा करना अपना परम् सौभाग्य मानते थे। वैसा गुरु–शिष्य का पवित्र सम्बन्ध बाद के किसी भी काल में देखने को नहीं मिला। इसी परिप्रेक्ष्य में डॉ. ए.एस. अल्तेकर ने कहा है कि–''शिक्षक एवं छात्र के सम्बन्ध स्नेहपूर्ण तथा घनिष्ठ थे और उनके भावी जीवन में भी बने रहते थे''। यदि वैदिक काल के पश्चात् हम बौद्ध काल में देखें तो वैदिक कालीन स्थापित गुरु–शिष्य सम्बन्ध की रुपरेखा देखने को मिलती है बस आश्रमों का स्थान मठों ने ले लिया था। छात्रों के शिक्षा, आचरण एवं नैतिक विकास पर गुरु व्यक्तिगत रुप से ध्यान देते थे। छात्रों का व्यवहार–विनय, आस्था, विश्वास एवं सेवायुक्त होता था।

मुस्लिम काल में भी गुरु–शिष्य के आदर्श सम्बन्ध की श्रेष्ठ परम्परा जो वैदिक काल में आरम्भ हुई थी वह यथावत् बनी रही। शिष्य गुरु की सेवा करना उसकी आज्ञाओं को शिरोधार्य करना अपना पुनीत कर्तव्य समझते थे। उनका विश्वास था कि गुरु की कृपा से ही उनको सच्चा ज्ञान प्राप्त हो सकता है। शिक्षक की छात्रों के प्रति स्नेह और पुत्रवत् व्यवहार होता था लेकिन मुस्लिम काल के अन्तिम वर्षों में छात्र–अनुशासनहीनता दृष्टिगोचर होने लगी थी। औरंगजेब ने भरे दरबार में अपने अध्यापक **शाहसालेह** का अपमान किया था। ब्रिटिश काल में गुरु–शिष्य सम्बन्ध की स्नेहपूर्णता एवं मधुरता या घनिष्ठता क्रमशः अवनति की ओर अग्रसर होने लगी थी, उनके सम्बन्ध में औपचारिकता का पुट आ गया था। यद्यपि छात्र अपने गुरुओं का आदर करते थे तथा अध्यापक अपने ज्ञान से छात्रों को प्रभावित करते थे, फिर भी गुरु–शिष्य के सम्बन्धों की आत्मीयता लुप्त होने लगी थी।

वर्तमान में गुरु–शिष्य सम्बन्ध

यदि वर्तमान युग को तकनीकी युग कहे तो कुछ गलत न होगा क्योंकि वर्तमान में सूचना एवं संचार तकनीक के क्षेत्र में अभूतपूर्व उन्नति हुई है। तकनीक के कारण आज संसार सीमा रहित ;इवनदकतलसमेद्ध हो गया है। आई.सी.टी. ;प्ण्ब्ण्ज्ण्द्ध के उपयोग ने दूरियाँ समाप्त कर दी हैं, साथ ही साथ हम यह भी निःसंकोच कह सकते है कि सूचना एवं संचार की क्रान्ति ने हमें 'वैचारिक प्रदूषण' की सौगात भी दी है। इसमें कहीं न कहीं हमारे गुरु–शिष्य सम्बन्ध का आदर्श जो वैदिक काल में स्थापित था वह प्रभावित हुए बिना नहीं रहा। आज शिक्षा का उद्देश्य सीमित होकर परीक्षा में उत्तीर्ण होने तक सिमट कर रह गया है। "परीक्षा की योग्यता का मापदण्ड और साथ ही साथ नौकरी का साधन होने के कारण उसमें अच्छे अंक लाने को ही चरम लक्ष्य समझकर छात्रों द्वारा नकल, नोटबुक परीक्षा भवन में ले जाना, निरीक्षकों का पता लगाकर आर्थिक प्रलोभन या धमकी देना आदि अनेक अनैतिकताओं का प्रादुर्भाव हुआ है"। वर्तमान में व्यवसायिक मनोवृत्ति से ग्रसित एक शिक्षक, विद्यालयी शिक्षण कार्य को गौण स्थान तथा कोचिंग शिक्षण कार्य को प्रमुख स्थान देता है। छात्रों के मन में यह बैठ जाता है कि वे येन–केन प्रकारेण परीक्षा का दरिया अच्छे नम्बरों से पार करा देंगे। ऐसे शिक्षक, शिक्षा को एक व्यवसाय के रुप में अधिक तथा अपने उत्तरदायित्वों के रुप में कम स्वीकार करते है। पत्र–पत्रिकाओं में आए दिन ऐसे समाचार पढ़ने को मिलते हैं, जो अध्यापक वर्ग की व्यावहारिक अवनति एवं उनकी झुंझलाहट को दर्शाते हैं जिसमें शिक्षकों द्वारा छात्र/छात्राओं के साथ अमानवीय व्यवहार एवं अनैतिक सम्बन्ध के आरोप लगते हैं। दूसरी तरफ यथार्थ और उपयोगिता से प्रेरित होकर आज छात्र अध्यापक को केवल एक सामान्य सेवारत् नौकर की मान्यता देता है, भक्ति एवं श्रद्धा के स्थान पर कार्य सिद्धि और परीक्षा में पास होने की मदद की क्षमता के आधार पर उनके महत्त्व को आँकता है। कक्षा में उपस्थिति तो एक औपचारिकता रह गयी है, छात्र अपने भविष्य का द्वार कोचिंग या ट्यूशन को मानते है। सिर्फ सूचना और संचार की टेक्नालॉजी ने ही संस्कार और मूल्य की जमीन को बंजर नहीं बनाया बल्कि पश्चिम की आँधी ने भी हमारे व्यवहार को प्रभावित किया है। छात्र आज–कल ज्ञान के लिए गुरु पर कम तथा तकनीकी पर ज्यादा विश्वास करते हैं। इससे भी छात्रों की निर्भरता अध्यापक वर्ग पर से कम हो गयी है। पहले छात्र गुरु के पास ज्ञान के लिए जाते थे लेकिन वर्तमान सन्दर्भ में देखा जाए तो छात्र गुरु से ज्ञान के लिए कम तथा अंक के लिए ज्यादा आकांक्षी रहते है इसी प्रकार की दूषित मानसिकता का व्यवहार गुरु–शिष्य सम्बन्ध को प्रभावित करता है। आज विश्वविद्यालयों में 75ः उपस्थिति के खिलाफ अराजक माहौल पैदा किया जा रहा है।

सामान्यतः यह कहा जाता है कि जैसा हम बीज बोएंगे वैसा ही हम फसल या फल की आशा कर सकते है। प्रत्येक व्यक्ति का व्यवहार चाहे वह गुरु हो या शिष्य आस–पास के सामाजिक वातावरण से निश्चित रुप से प्रभावित होता है, वातावरण से प्रभावित होकर व्यक्ति अव्यवहारिक या व्यावहारिक आचरण करता है। शिक्षा में व्याप्त पक्षपात, संकुचित सोच, अथवा व्यक्तिगत हित की धारणा से ही विद्यालयी वातावरण विषाक्त होता जा रहा है। गुरु–शिष्य के सम्बन्ध को आदर्श बनाने में एक गुरु की महती भूमिका होती है क्योंकि विद्यालय में मूल्यों के स्रोत के रुप में शिक्षक का स्थान महत्त्वपूर्ण होता है। यदि हम एक आदर्श गुरु नहीं बन सकते तो शिष्य से एकलव्य बनने की आशा क्यों करे?

भारतीय शिक्षा को उपयोगी एवं साक्षरता बढ़ाने हेतु प्रयास

सर्व शिक्षा अभियान

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 45 के अनुसार–सभी बच्चों की 14 वर्ष की अवस्था तक निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का उल्लेख किया गया। समय–समय पर विभिन्न शिक्षा आयोग/नीति का गठन किया गया। प्रमुख रुप से जिसमें राधाकृष्णन आयोग (1948–49), मुदालियर आयोग (1951–53), कोठारी आयोग (1964–66) आदि का गठन हुआ। National Education Policy 1986 ने प्राथमिक शिक्षा का सर्वभौमिकरण स्वीकार करते हुए शिक्षा के पाठ्यक्रम की प्रति

पाँच वर्ष पर समीक्षा करने पर बल दिया। इस प्रकार National Education Policy 1986 की समीक्षा वर्ष 1992 और वर्ष 2000 में की गयी। इसी क्रम में वर्ष 2005 में National Curriculum Framework 2005 तैयार किया गया। सबके लिए शिक्षा "Education for All" का उद्देश्य प्राप्त करने के लिए operation blackboard, Mid-day-meal scheme, DPEP अन्य कार्यक्रम आरम्भ किए गये परन्तु ये अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में असफल रहे। इस प्रकार 2001 में सर्व शिक्षा अभियान को प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर पूरे देश में लागू किया गया और पूर्व के सभी कार्यक्रमों को सर्व शिक्षा अभियान का अंग स्वीकार किया गया। यद्यपि सर्व शिक्षा अभियान का उद्देश्य 2007 तक सभी बच्चों को 5 वर्ष की प्राइमरी शिक्षा एवं वर्ष 2010 तक उच्च प्राइमरी शिक्षा पूर्ण कर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देना था। यह कार्यक्रम अपना पूर्ण उद्देश्य तो प्राप्त नहीं कर सका परन्तु सर्व शिक्षा अभियान का परिणाम सन्तोषजनक रहा।

सरकारी डाटा के अनुसार शैक्षणिक सत्र 2014–15 के अनुसार सर्व शिक्षा अभियान से लगभग 11 करोड़ छात्र लाभान्वित हुए हैं। 6 से 11 वर्ष के 99ः छात्रों को प्राथमिक शिक्षा प्राप्त हुई और 11–14 वर्ष के 90ः बालकों को उच्च प्राथमिक शिक्षा प्राप्त हुई है। मानव संसाधन विकास मन्त्री श्री प्रकाश जावेड़कर के अनुसार आज देश में कक्षा 1 से 12वी तक 23 करोड़ छात्र हैं जिसमें 13 करोड़ छात्र सरकारी विद्यालयों में है। सरकारी विद्यालयों में गिरावट आने के कारण सरकारी विद्यालयों में प्रवेश लेने वाले छात्रों में 4ः की कमी आयी है जबकि निजी स्कूल में 5ः की बढ़ोत्तरी हुई है। इसका कारण अभिभावकों में भ्रम पैदा होना है। अभिभावकों में तीन भ्रम पैदा हो गये हैं –

1. महंगी शिक्षा ही अच्छी शिक्षा है।
2. प्राइवेट शिक्षा अच्छी शिक्षा है।
3. अंग्रेजी माध्यम से ही अच्छी शिक्षा प्राप्त हो सकती है।

शिक्षा को प्रभावी बनाने हेतु सुझाव

''शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य आन्तरिक शक्तियों को विकसित करना एवं अनुशासित करना है''–डा0 एस0 राधाकृष्णन।

अध्यापक वर्ग को चाहिए कि वह अपने आचरण एवं अध्यापन कला के प्रभाव से छात्रों में ऐसी समझदारी उत्पन्न करे कि छात्र स्वयं ही उनका सम्मान करने लगे। शिक्षण के साथ–साथ जो सद्व्यवहार की भावना विकसित कर सत्य के दर्शन करा दे वह वास्तविक गुरु है, शिक्षक है। अध्यापक वर्ग को इस बात का कर्त्तव्यबोध हो कि विद्यालय में छात्र क्या सीख रहे है? क्यों सीख रहे है? कितना सीख पा रहे है? क्या वे कुछ नया सीख पा रहे है। उन्हें इस बात अहसास होना चाहिए कि वे समाज के सभी बच्चों के अभिभावक है। उनमें समाज के प्रत्येक बच्चे व उनसे जुड़ी हर घटना के प्रति संवेदनशीलता का होना अति आवश्यक है। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित बिन्दुओं पर भी ध्यान देना परम् आवश्यक है –

1. छात्रों में संस्कार का निर्माण एवं मूल्य आधारिक शिक्षा दी जाये।
2. शिक्षा पद्धति में नयापन लाना होगा।
3. विद्यालयों में महापुरुषों के जन्मोत्सव मनाये जाए।
4. पाठ्य विषय के साथ धार्मिक, भौतिक एवं नैतिक मूल्यों की शिक्षा भी दी जाए।
5. शिक्षा के आदर्शों जैसे–सादा जीवन उच्च विचार, ब्रह्मचर्य, अनुशासन जैसे व्यवहारों को अपने जीवन में अपनाना पड़ेगा।
6. शिक्षक का आचरण भी आदर्श हो जो मौन शिक्षण का कार्य करता है।
7. शिक्षकों को अपनी व्यावसायिक प्रवृत्ति को त्यागकर अपने उत्तरदायित्वों का ईमानदारी से निर्वहन करना होगा।

एक बार गाँधी जी से पूछा गया कि भारत की शिक्षा पद्धति के दोष बताएं तो उनका उत्तर था–''हमारे विद्यालयों में नैतिक एवं धार्मिक शिक्षा का अभाव है।'' छात्रों को अपनी सोच में परिवर्तन लाना होगा। तकनीकी चाहे कितनी विकसित हो जाए लेकिन गुरु के बिना ज्ञान नहीं हो सकता क्योंकि कहा गया है कि –

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागो पायँ।

बलिहारी गुरु आपणो गोविन्द दियो बताय।।

विद्यालय में छात्र शिक्षक वर्ग को आदर्श मान लेते है क्योंकि इस अवस्था में कहीं न कहीं अनुकरण की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है। अतः अध्यापक वर्ग को गरिमा बनाए रखने के लिए अपनी आवश्यकता और उपयोगिता को नये सिरे से सिद्ध करना होगा एवं अपने व्यवहार में आदर्श प्रवृत्ति को सम्मिलित करना होगा, ताकि गुरु की पहले वाली स्थिति पुनः स्थापित हो सके। जैसा कि इस पंक्ति में कहा गया है –

गुरु ब्रह्मा, गुरुः विष्णु गुरुः देवो महेश्वरः।

गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।।

सन्दर्भ :

1. दिनेश कुमार; (2012) अवस.41 सामान्य जाति एवं अनुसूचित जाति के बेसिक शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्तियों का अध्ययन, म्कनबंजपवदंस भ्मतंसकण
2. जगमोहन सिंह राजपूत, पूर्व एन.सी.ई.आर.टी. निदेशक, लेख–''शिक्षा का चरमराता ढाँचा'', दैनिक जागरण मेरठ 22 फरवरी 2018.
3. Lal Raman Bihari; and Kant Krishna; (2016). Contemporary India and Education, Meerut, R. Lall Book Depot.
4. Lal Raman Bihari; and Palod Sunita; (2016). Philosophical and Sociological Prospectives of Education, Meerut, R. Lall Book Depot.
5. प्रेमपाल शर्मा, साहित्यकार एवं शिक्षाविद्, लेख–''छात्रों–शिक्षकों की शर्मनाक जुगलबन्दी,'' दैनिक जागरण मेरठ, 23 फरवरी 2018.
6. प्रकाश जावेड़कर, केन्द्रिय मानव संसाधन विकास मन्त्री, साक्षात्कार दैनिक जागरण मेरठ 17 मई 2017.
7. सुरेन्द्र भास्कर; (2013) अवस.42 बदलते तौर में शिक्षा, शिक्षक व छात्र सम्बन्ध, Educational Herald.

**** Corresponding Author:***

डॉ. ऋषिपाल सिंह, प्रवक्ता

डॉ. सोनिया पँवार, प्रवक्ता

किसान इण्टर कॉलिज कंकरखेड़ा, मेरठ